श्री रामलीला

डॉ० भानुशंकर मेहता

[सन् १९४८ से वाराणसी के ख्याति प्राप्त Pathologist हैं। Indian Medical Association के उपाध्यक्ष रहे हैं। पत्रकारिता के सम्पादन के क्षेत्र में वन्देमातरम् शताब्दी और स्मारिका विशेष उपलब्धियाँ हैं। नाट्यशास्त्र के अध्ययन के साथ रंगमंच पर भी अभिनय, निदेशन, लेखन आदि में योगदान है। काशी की नागरी नाटक मण्डली का प्रेक्षागृह आपकी सेवाओं का फल है। काशी और रामलीला पर शोधकार्य में अनवरत रत हैं।]

दिनांक १२.८.१९९८ को ज्ञान-प्रवाह वाराणसी में दिये गये व्याख्यान का सारांश

रामलीला की चर्चा में सबसे पहले हमारे नगर में रामनगर की जो लीला होती है, उसका जो उद्देश्य वाक्य है, वह मैं आपके सामने रखना चाहूँगा -

अथ लीला अनुकरणमं प्रवक्ष्यामि महामुने ।
यत्कृत्वा चाथ दृष्ट्वा हि मुच्यते पातकैः नरः ॥

यह जो लीला है इसको करने से, देखने से, सुनने से, समस्त पातक नष्ट हो जाते हैं । मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि हमलोग भी आज जो राम-कथा श्रवण कर रहे हैं, वह हमको पुण्य प्रदान करे ।

मैं बहुत बचपन में (-शिवपुर में मेरा ननिहाल था -) प्रति रात्रि इन महीनों में यानि भादों-आश्विन में रामलीला देखने जाता था । अपनी दरी साथ ले जाते थे और तीस दिन लीला देखते थे। उस जमाने में टी. वी. और रेडियो जैसी चीजें नहीं थीं । लीला देखने में बड़ा आनन्द आता था। उसके बाद प्रवृत्ति नाटक की ओर हुई और तब मुझे एक गुरु मिले, पं० साँवलजी नागर । बहुत बड़े गुरु थे। उन्होंने मुझे हिन्दी पढ़ायी। यद्यपि मैं मेडिकल कॉलेज का छात्र था किन्तु हिन्दी पढ़ी। गुरुजी ने कहा पढ़ो हिन्दी, हिन्दी पढ़ना होगा। और सन्त छोटेजी महाराज के यहाँ रामायण प्रतियोगिता सम्मेलन होता था, उसका संचालन हमारे गुरु साँवलजी नागर करते थे। एक दिन वे सन्तजी से बोले कि अब मैं तो नहीं करूँगा, अब हमारा यह लड़का करेगा संचालन। अनेक वर्षों तक संतजी के उस रामायण सम्मेलन का संचालन करने का सौभाग्य मिला। उससे बड़ा सौभाग्य यह हुआ कि बहुत से राम-कथा मर्मज्ञों की बात सुनने को मिली। अनन्त श्रीविभूषित करपात्रीजी

महाराज, पण्डित राजराजेश्वर शास्त्री द्रविड़जी, ऐसे बहुत से विद्वानों की बातें सुनने को मिलीं और ज्यों-ज्यों सुना त्यों-त्यों रामकथा के अन्दर मेरी रुचि बढ़ती गयी ।

बात यह है कि कथा में मैं भक्त बनकर नहीं जाता था। पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त था। अत: हर बात में तर्क करने की आदत पड़ गयी थी। मुझे लगता था कि इस कथा में है क्या ? बच्चों की कहानी ही तो है। एक था राजा, तीन रानियाँ, चार पुत्र। मझली रानी के कहने पर बड़े राजकुमार को वन जाना पड़ा और उसके ही पुत्र को राज देने का फ़ैसला हुआ। बड़े राजकुमार को वन में राक्षस मिला - संघर्ष हुआ और राक्षस मारा गया। जब अवधि पूरी हुई तब बड़ा राजकुमार घर लौटा और राजा बन गया। यह तो अनेक बाल कथाओं में होता है इसमें अनूठा क्या है ? अगर यह बाल-कथा है तो इसमें ऐसा क्या है कि यह विश्व व्यापी हो गयी है, एक बालकाव्य महाकाव्य कैसे बन गया ? यह तो विद्वान् शोधकर्ता ही बतायेंगे। मैंने तो रामकथा में अवगाहन किया तो समझ में आया कि यह तो एक महासागर है, जितना गहरे जाइये उतने अधिक मोती मिलते जायेंगे, कोई अन्त नहीं है। इस महाकाव्य की लोकप्रियता पर विशेष अध्ययन की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों में अनुसंधान बहुत होते हैं पर इस दृष्टि से शायद नहीं हुआ है ।

रामकथा को दृश्य बनाया गया और उसे रामलीला कहा गया। यह सर्व विदित है कि रामकथा का मंचन अनेक रूपों में होता है - मार्गीय नाटक, लोक नाट्य, पुतली और छाया नाट्य, संगीत और नृत्य नाट्य। अब एक कठिनाई आ गयी है कि किसी भी विधा में प्रदर्शन हो उसे रामलीला कहा जाता है। असम के अंकियानाट को या कर्णाटक के यक्षगान को रामलीला कहें तो दोहरी हानि होती है-। एक तो उस विधा की अस्मिता आहत होती है- और दूसरे लीला विधा पर आघात होता है। बात को कुछ अधिक स्पष्ट करना होगा। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि हर विधा महत्त्वपूर्ण है, सुन्दर है, उसका अपना स्वरूप है और फिर उसमें रामकथा हो तो सोने में सुहागा है। कहा भी है - 'रामकथा होवै जहाँ, गंगाहू चलि आवै तहाँ'। मैं इन सभी नाट्य नृत्य विधाओं का प्रशंसक हूँ केवल लीला का लेबुल सब पर चिपकाने का विरोधी हूँ । पहले तो लीला की परिभाषा समझ लें। प्रभु की लीला तो अनवरत चलती रहती है। इसे नित्य-लीला कहते हैं, फिर इस संसार में जब जब धर्म की हानि होती है प्रभु अवतार ले कर धरती का भार उतारते हैं। इसे अवतार लीला कहते हैं। फिर जब भक्तगण प्रभु की लीला के अवतार की याद करते हैं और उनका गुणगान करने हेतु पूजा भाव से उस को अपने भौंड़े ढंग से, तुच्छ रूप में दोहराते हैं तो वह होती है अनुकरणात्मक लीला। रामलीला इसी प्रकार की लीला है।

लीला अपने आप में विशद विषय है। वैसे आमोद प्रमोद, खेल, स्पोर्ट ऑफ़ गॉड को लीला कहते हैं। हलायुध कोश की परिभाषा के अनुसार विरहाकुल नायिका प्रियतम की याद में जब उनका वेश धारण करती है, उनकी तरह चलती है, बोलती है तो उसे लीला करना कहते हैं। हम भी प्रभु के विरह में उनके महान कार्यों की याद करके अवतार कार्यों का अनुकरण करते हैं तो लीला होती है। स्मरण रहे कि यह जगत् प्रभु की स्वैच्छिक आनन्दमयी निर्लिप्त सर्जना है-, माया का विस्तार है, बाल क्रीड़ा है, ताश का घर है। जब तक प्रभु की इच्छा होती है, वे क्रीड़ा करते हैं और जब ऊब जाते हैं तो लीला समेट कर योग निद्रा में सो जाते हैं ।

अवतार अनेक हुए हैं और उनकी लीलाओं का अनुकरण होता है। इनमें सबसे अधिक मनभावन अवतार हैं कृष्ण और राम। कृष्ण लीला भी होती है और उनकी लीलाओं पर आधारित रासलीला भी होती है। रामावतार की लीला रामलीला है। अन्य लीलाएँ हैं नृसिंह लीला, वामन लीला, और दशावतार की झाँकी लीला। वाराणसी में कहते हैं ध्रुव लीला भी होती थी । वाराणसी में इस समय राम, कृष्ण, नृसिंह, वामन, फाग और दशावतार लीलाएँ होती हैं। वाराणसी की कृष्ण लीला - रामलीला की शैली में होती है जबकि मथुरा की रामलीला में रास-लीला का पुट होता है। वाराणसी की रामलीला मर्यादा पुरुषोत्तम की लीला है अस्तु मर्यादा का पूरा ध्यान रक्खा जाता है।

लीला नाटक नहीं है अपितु एक अनुष्ठान है। अस्तु इसके स्वरूप को नाटक या लोक नाट्य से अलग करके देखना आवश्यक है। लीला में अभिनेता नहीं होते बल्कि स्वरूप होते हैं जो भक्तों के लिए जीवन्त देवता हैं। लीला प्रदर्शन के समय ही नहीं, लीला की अवधि में स्वरूपों की दैव प्रतिमा की तरह ही अर्चना की जाती है। रामलीला २२ से ३० दिन तक होती है। शृंखला है। हरिवंश में कहा है कि - रामायणं महाकाव्यं उद्देश्यं नाटकी कृतम्। कहते हैं कि मूल रूप में वाल्मीकि ने २५-३० नाटक लिखे थे जो बाद में एकत्र करके महाकाव्य बना दिया गया। इसका प्रमाण है कि मार्गीय नाटक की तरह लीला का प्रत्येक अवतरण पूर्ण होता है उसमें आरम्भ, उत्कर्ष और समापन होता है। किसी अन्य महाकाव्य में ऐसा नहीं है। वैसे लीला की अनेक मण्डलियाँ हैं जो अपने साधन और सुविधानुसार ५ दिन या ११ दिन की लीला भी करती हैं। प्राचीन लीला मण्डलियाँ राम-बनवास से रावण-वध तक की लीला करती हैं जैसा कि एक श्लोक में कहा गया है - 'आदौ राम तपोवनादिगमनं' से लेकर 'रावण-कुम्भकरण हननम्' तक। एक स्थापना यह भी है कि महाकवि ने इतनी ही रामायण, अयोध्या काण्ड से लंका काण्ड तक ही

लिखी थी और बाल काण्ड तथा उत्तर काण्ड बाद में जोड़े गये। काशी में रामनगर-रामलीला रावण जन्म से आरम्भ होकर पुरजनोपदेश तक (३० दिन) चलती है जबकि ४५० वर्ष से चल रही चित्रकूट और गोस्वामी जी की लीलाएँ २२ दिन की होती हैं। अब अस्सी की लीला में धनुष-यज्ञ और पुरजनोपदेश की लीलाएँ जोड़ दी गयी हैं। चित्रकूट लीला के क्रम में कोई अन्तर नहीं हुआ है। चित्रकूट लीला का समापन दशावतार की झाँकी से होता है। यह बात लीला का इतिहास समझने के लिए नोट करने लायक है। गोस्वामी तुलसीदास ने भारत भ्रमण किया था और रामलीला का स्वरूप बनाने के लिए जहाँ भी रुचिकर कुछ था वह ले आये थे। महाराष्ट्र में ललित या दशावतार लीला होती है। चित्रकूट की अन्तिम लीला यही बात याद दिलाती है। तुलसीदास जी ने अपनी कृष्ण-लीला में दशावतार लीला शामिल की थी जो आज भी होती है।

लीला का इतिहास बहुत पुराना है। दक्षिण भारत के तमिल प्रदेश में 'इल बिलैया पुराणम्' नाम से लीला का विवरण है जिसके आधार पर २००० वर्ष पूर्व करीब ६० शिव लीलाएँ होती थीं। हरिवंश पुराण में 'कौबेर रम्भाभिसारम्' नाम से लीला का विवरण है जिसमें विस्तार से बताया है कि किस कलाकार ने कौन सी भूमिका की थी। महर्षि वाल्मीकि जब रामायण लिख रहे थे तो वे नाट्य से परिचित थे। बाल काण्ड में लिखते हैं - 'वधू नाटक संघैश्च संयुक्ता सर्वतः पुरीम्' और इसी प्रकार अयोध्याकाण्ड में ननिहाल में भरत जब उदास और विकल हो जाते हैं तो उनके मित्र उनके लिए - 'नाटकान्यपरेऽस्माहुर्हास्यानि विविधानि च' अर्थात् उनके मनोरंजन के लिए संगीत और नाटक का प्रबन्ध करते हैं।

वैष्णव सम्प्रदाय में पाँच रात्र संहिताएँ हैं जिनमें भगवान् की पूजा करने की विधियाँ बतायी गयी हैं जिसमें लीला भी एक पूजन विधि है। इसी प्रकार बृहत् ब्रह्म संहिता है। एक और प्रसिद्ध कथा से आप अवश्य परिचित होंगे कि महर्षि वाल्मीकि ने रामायण लिखी और लव-कुश को कण्ठस्थ करायी, फिर राम के दरबार में दोनों बालकों ने इसका गान किया। सच पूछिये तो लव-कुश ही पहले कलाकार थे जिन्हों ने हरिकथा का गान किया और शायद यहीं से लीला आरम्भ हुई।

संस्कृत साहित्य में राम कथा पर आधारित बहुत से नाटक हैं। बौद्ध साहित्य और जैन साहित्य में जातक और रासो हैं यद्यपि इनकी कथा विकृत है फिर भी है राम-कथा।

आधुनिक इतिहास के अनुसार लीला विगत चार-पाँच सौ साल से हो रही है और इसका

उद्देश्य है राम या कृष्ण भक्ति का प्रचार प्रसार। मथुरा वृन्दावन में रासलीला का आरम्भ महाप्रभु वल्लभाचार्य के समय से हुआ। जगन्नाथपुरी में हम चैतन्य महाप्रभु को लीला करते देखते हैं। काशी में चित्रकूट मण्डली विगत् ४५० वर्षों से लीला कर रही है और यह लीला अवध और चित्रकूट (बांदा) में भी होती थी।

कहते हैं रामलीला जीते हैं - अर्थात् वह नाटक नहीं है कि देखें, उसकी समग्र कथा को जीना पड़ता है। पूरा समाज रामकथा में अवगाहन करता है, मर्यादित जीवन की शिक्षा प्राप्त करता है। रामलीला वास्तव में एक सांस्कृतिक पर्व है। एक मजेदार बात कहूँ - भारतीय दृष्टि की बात, विदेशी विद्वान् नहीं मानते कि रामलीला अतीत को वर्तमान से जोड़ती है क्योंकि इसमें समय और स्थिति - टाइम और स्पेस अर्थहीन हो जाते हैं। लीला दर्शक को उठाकर एक दूसरे लोक में ले जाती है किन्तु शर्त यह है कि आप भक्तिभाव से, आस्था के साथ रामलीला देखें। रामलीला पढ़ी जाती है, अजब सी बात है न। रामनगर की रामलीला में सभी (नेमी) दर्शकों के पास रामचरितमानस की पोथी होती है और संवादों के बीच वे उसका पाठ करते रहते हैं। लीला सुनी जाती है - देखने की जरूरत नहीं है - कहा न 'मन दृग देखहिं हरिलीला' सब जानते हैं कि आज की लीला में क्या होगा, कौन से संवाद बोले जायेंगे। हजारों की भीड़ है, दूरी बहुत है, कुछ भी नहीं दिखता। सीता बना नन्हा बालक संवाद बोल रहा है, सन्नाटे में सुनाई भी देता है। उधर श्रीराम रामेश्वर मन्दिर में पूजन कर रहे हैं, स्थान अति संकुचित है-, मुश्किल से पाँच छह आदमी के लिए स्थान है पर बाहर हजारों की भीड़ खड़ी है। पूछिये कि आप क्या देख रहे हैं ? तो कहेंगे प्रभु शिवजी की पूजा कर रहे हैं ! पूछिये कि भाई यहाँ से तो कुछ भी नहीं दिखता तो कहेंगे - दिख तो रहा है - क्योंकि मनदृग देख रहे हैं। मन की आँखों से लीला देखी और सुनी जाती है।

आज यह जो सत्य-असत्य का संघर्ष है, अन्याय की बात है इसके लिए आवश्यक है कि रामलीला को सही ढंगसे दिखाया जाय। यहाँ थोड़ी भरत के नाट्य-शास्त्र की चर्चा भी आवश्यक है। भरत मुनि ने नाटक को कई नाम दिये हैं - अवस्था- अनुकृति, लोकवृत्तान्तानुकरण, वृत्तान्तानुदर्शकम्, - अनु-दर्शकम् माने पहले जो हुआ था उसे दिखाने का यह नाट्य है। लेकिन मुझे जो नाम सबसे अच्छा लगता है वह है भावानुकीर्तनम्। यह जो लीला है वह भावानुकीर्तनम् ही है। बिना भाव के कुछ नहीं हो सकता। और आस्था है तो कीर्तन करना ही होगा। इसे चाक्षुष यज्ञ भी कहा है। लीला करना माने कोई तमाशा करना नहीं, यज्ञ करना है। भारतीय दर्शन में रस के महत्त्व से आप परिचित हैं मगर भरत कहते हैं, 'नाटकैश्च शृण्वतां पश्यतां रसान्' अर्थात्

नाटक में रस सुनते हैं, देखते हैं। बात हास्यास्पद लगती है पर है बिल्कुल सच। रस देखा जाता है। रामलीला का एक प्रसंग देखें। लक्ष्मण मूर्छित पड़े हैं, राम संवाद बोलते हैं - सीधा सादा संवाद, क्योंकि यह स्वरूप कोई अभिनेता तो है नहीं कि विलाप में करुणा की धारा बहा देगा। फिर इस सपाट संवाद को सुन कर लोगों की आँखें भर आतीं हैं - लोग रोते हैं। यह ऐक्टर ने नहीं- वाल्मीकि ने, तुलसी ने रुलाया है, स्वयं प्रभु उपस्थित हैं और उनकी वाणी ने भक्त को रुलाया है। वे भाव को जगाते हैं, आप रस की धार सुनते हैं, देखते हैं।

काशी में लीला की बात कहें तो एक मुकदमा यहाँ हुआ था इलाहाबाद हाई-कोर्ट में। उससे ज्ञात होता है कि यहाँ चित्रकूट-लीला सम्वत् १६०० से हो रही है। यानि करीब-करीब अब से लगभग साढ़े चार सौ साल से अधिक हो गये। यह १९०४ का वाद है, जस्टिस स्टेनली और जस्टिस बैनर्जी के समक्ष हुआ था और छन्नूदत्त व्यास बनाम बाबू नन्दन महन्त का मुकदमा था। इसमें मामला यह था कि रामलीला मन्दिर से सम्बन्धित है कि नहीं। इसका जो फैसला किया गया उसमें यह कहा गया कि रामलीला किसी मन्दिर की चीज़ नहीं है। उन्होंने कहा यह एक जुलूस है, एक पेजेन्ट है, और यह कई शताब्दियों से हो रहा है। न्याय मूर्ति ने यह भी कहा कि कम से कम सम्वत् १६०० में मेधा भगत थे और वह रामलीला कराते थे। तो आप विश्वविख्यात जो भरत-मिलाप देखते हैं, नाटी इमली का, इसके बारे में यह एक न्यायमूर्ति का कथन है, उसको मानलें। उस समय रामचरित मानस नहीं लिखा गया था। रामचरित मानस सम्वत् १६३१ में लिखा गया है। अब यहाँ थोड़ी सी बात, मैंने खोजने की कोशिश की। वाल्मीकि रामायण के आधार पर उसका पाठ करते थे और मेधा भगत उर्फ नारायण दासजी वैष्णव थे। उनकी सारी परम्परा श्रीनाथ मन्दिर की, गोपाल मन्दिर की थी और आप जानते हैं गोपाल मन्दिर में प्रतिदिन चार बार शृंगार होता है। हर बार नया अनूठा शृंगार होता है उसकी झाँकी ले लेते हैं। चाक्षुष यज्ञ होता है बार-बार। ठीक उसी परम्परा में रामकथा को उन्होंने प्रस्तुत किया था।

आज भी बाईस दिन की लीला में बाईस झाँकियाँ ही होती हैं। उसमें कोई सम्वाद विशेष नहीं है, कोई खास गतियाँ नहीं हैं, केवल प्रतिदिन एक झाँकी तय कर ली जाती है। और कुछ झाँकियाँ तो अपूर्व हैं। एक झाँकी तो सुमेरु-पर्वत की झाँकी है। काशी के जितने रईस और व्यापारी हैं उनसे यह आशा की जाती है कि वह जरूर से जाकर वहाँ इस झाँकी को देखेंगे। यह चौका घाट पर होती है। भगवान् सुग्रीव की गोद में सिर रखकर सोये हैं, हनुमान् जी पैर दबा रहे हैं, लक्ष्मण जी तीर-धनुष ताने चौकसी कर रहे हैं, बाकी सब बन्दर आस-पास हैं। और दो घण्टे

तक यह झाँकी स्थिर रहती है। लोग दर्शन करते हैं, लाल महताबी जलती है, सफेद महताबी जलती है। भरत-मिलाप की झाँकी में प्रभु रथ से उतर कर दौड़ते हैं, उस समय साक्षात् परब्रह्म वहाँ पधारते हैं, यह मैं आपको पूरे विश्वास के साथ कह रहा हूँ। जब आपको देखना हो पूरी आस्था के साथ जाइये, आँख बन्द करके नहीं। वह एक क्षण, शायद एक सेकेण्ड से भी कम का समय होता है। रथ से उतर कर वे भरत की ओर भाग रहे हैं, उस क्षण में कुछ होता है। इलहाम होता है जिसको कहते हैं, अन्दर से, जिन्हों ने देखा है वह जानते हैं। और उसके बाद भरत - मिलाप होता है और तीन-साढ़े-तीन मिनट की इस लीला को चार लाख आदमी देखने आत हैं संसार का सबसे बड़ा नाटक , सबसे अधिचक दर्शक का नाटक और सबसे कम समय का नाटक।

ऐसी लीला नाग-नथैया की भी है। भगवान् कूदते हैं गंगा में कदम्ब वृक्ष से और सर्प के सिर पर खड़े हो जाते हैं, दो चक्कर लगाते हैं उस जलीय-मंच का और बस लीला खत्म। वह भी बहुत कम समय की है। लेकिन जो चमत्कार भरत-मिलाप में होता है वह अभूतपूर्व है। और भी एक लीला होती है। मेरे पास बहुत से यूरोप के नाटककार आये थे और थके हुए थे, काठमाण्डू से आये थे, थियेटर एशिया की कॉन्फ्रेन्स थी। मैंने कहा, नहीं, चलिए आप मेरे साथ। मैं उनको लाया, स्पेन के प्रोफेसर थे। उस दिन क्या लीला थी कि भगवान् युद्ध में जीत चुके हैं और अब अवध की ओर चल रहे हैं। तो आगे काशी के व्यापारी और रईस उस विमान को उठाते हैं, पीछे चौका घाट के लोग उसको पकड़ते हैं। चौकाघाट के लोग उस विमान को पीछे खींचते हैं और काशी के लोग उसको आगे खींचते हैं। उस अँधेरी रात में करीब दस-ग्यारह बजे लीला होती है यह, खाली महताबी की रोशनी होती है। नीचे कुछ नहीं दिखता, ऊपर आसमान में एक उड़ता हुआ विमान दिखता है। कभी बहुत पीछे चला जाता है, कभी बहुत आगे चला जाता है। वह लोग तो चमत्कृत हो गये। बोले ऐसा तो दुनिया में हमने कहीं देखा ही नहीं। अभूतपूर्व। बल्कि दो ही एक आदमी आये थे, उन्होंने मोटर भेज कर सबको बुलवाया कि नहीं देख लो, यह चीज़ देखने को नहीं मिलेगी। केवल यात्रा। भगवान् जा रहे हैं, चौकाघाट यानि लंका वाले कह रहे हैं कि नहीं प्रभु, यहीं रहिए और अवध के लोग कह रहे हैं कि अब आ जाइए वापस ! भरत जी आपकी प्रतीक्षा में हैं।

इसी तरह की एक झाँकी वहाँ होती है विजयादशमी की। किसी जमाने में विजयादशमी पर समूचे बनारस की अभिजात्य जनता विजयादशमी देखने जाती थी, चौकाघाट में। उसका विस्तार

नहीं करूँगा, एक बात बताऊँगा कि मैंने रावण से बात की। एक मुख का रावण होता है यहाँ। श्रीराम तीर मारते हैं, ठीक सन्धिकाल पर। ज्यों ही बन्दूक छूटी, एक तीर मारा, उसके पेट में लगा, रावण गिर पड़ता है। और भगवान् तुरन्त उसका चेहरा उलट कर अपनी माला में से कुछ तुलसी-दल उसके मुख में डाल देते हैं। रावण ने मुझसे कहा मैं सच में मर जाता हूँ और भगवान् जब तुलसी मेरे मुँह में डालते हैं, तब मैं पुन: जी जाता हूँ। ऐसा देखा है वे बालक वास्तव में भगवान् हो जाते हैं।

मुझसे एक बात कही, वहाँ बड़े भारी हमारे नाटक वाले लोग हैं, संगीत नाटक अकादमी वगैरह के , तो वे बड़ा अच्छा नाटक करते हैं, जटा-वटा लगाए बड़ा एक ऐक्टर था। अच्छा ऐक्टर था जो राम का अभिनय कर रहा था। सो हमने कहा कि भई अभिनय तो तुमने बहुत अच्छा किया, और हमारे यहाँ जो बालक राम बनता है उसको अभिनय नाम की कोई चीज ही नहीं आती। किन्तु उसके मैं पैर छू सकता हूँ, तुम्हारे नहीं छूऊँगा। बड़ा अन्तर है नाटक और लीला में। क्योंकि मैंने अरविन्द की सावित्री का अध्ययन किया, उसमें बहुत से श्लोक मिले, लाइनें मिलीं जो बताती हैं कि भगवान् के रहने के लिए ये स्वरूप मन्दिर होते हैं, क्योंकि अभी आपसे चर्चा करूँगा कि चयन जब होता है छोटे बालक क्यों चुने जाते हैं। क्योंकि भगवान् उन्हीं में रह सकते हैं और मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है कि इनमें से बहुत से स्वरूप ऐसे होते हैं जिसमें भगवान् आते हैं। उनकी चेष्टा आप देखिएगा तो समझ में आ जाएगा कि वह साधारण बालक नहीं है।

'गौतम-चन्द्रिका' नामक एक पुस्तक है। मुझे तो मिली नहीं परन्तु आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने उसका पूरा विवरण दिया है। उसमें लिखा था कि गोस्वामीजी ने पहली बार राम-राज्य की लीला की। अस्सी घाट पर। यह जगह आज भी वहाँ विद्यमान है , सब कुछ है। वो लीला कैसे हुई इसका वर्णन है। ऐसे ही बारहवीं शताब्दी में कवि अद्दहमाण ने सन्देशरासक में मुल्तान की रामलीला का वर्णन किया है। १५१६ में नानकजी 'गावहिं सीते राजे राम' लिखते हैं। यह बात खूब समझ में आ जाती है कि लीला एक नाटक नहीं है। नाना रूपों से इसका मंचन होता है, यह बात मैंने पहले कही है। शुरू करने पर जो आदमी आयोजन करता है, कन्वीनर होता है वह एक संकल्प करता है, विधिवत् संकल्प करता है, श्लोक पाठ के साथ और उसके बाद जो बालक स्वरूप बनने वाले हैं, वे पूजा करते हैं। वो भी संकल्प लेते हैं और फिर मुकुट का पूजन होता है। और वह चमत्कारिक क्षण आता है जब अभिमन्त्रित मुकुट उनके सिर पर रखे जाते हैं। जिस क्षण मुकुट रख दिया गया, वह भगवान् हो गये। अब वे धरती पर पैर नहीं रखते, हम लोग

उनको कन्धे पर उठा कर ले चलते हैं। और केवल जैसे हमारे ऐक्टर हैं जब नाटक शुरू होने वाला होता है तो मेकअप करते ही ऐक्टर बन गये, शिवाजी बन गये, राणा प्रताप बन गये, पर यहाँ तो वे चौबीसों घण्टे राम रहते हैं। इनको अलग रखा जाता है, इनकी सेवा-अर्चना देव प्रतिमा की तरह की जाती है और चौबीस घण्टे इनकी सेवा करनी चाहिए। जहाँ पर ऐसा नहीं होता, वहाँ 'रामलीला' नहीं होती।

अब तुलसीदास की जो रामलीला है, उसकी चर्चा करेंगे पर एक बात जो मेरे समझ में आई कि उन्होंने उसमें जितनी चीजें डाली हैं, उससे स्पष्ट होता है कि वे कई चक्र भारत-भ्रमण कर आये थे। केरल से, उड़ीसा से, दक्षिण से चीजें लाये थे। इसलिए बनारस की रामलीला में, समूचे भारत का दर्शन होता है, यह याद रखिए। एक बात जो तुलसी ने, कई बार, नाटक की बात कही है - रघुनायक-लीला, नृप-लीला, हनुमत्-लीला - 'खेलहूँ बालकन मीला----करौं सदा रघुनायक लीला' - वो जानते थे नाटक के बारे में। उनके सूत्र भी बहुत हैं नाटक के बारे में। अच्छे नाटक के जानकार रहे हैं, मगर जिस ढंग की लीला उन्होंने शुरू करायी, उसके बारे में बड़ी अच्छी चौपाई लिखी है -

'जाको अर्थ जहाँ है जैसो, लीला ललित लखावति तैसो।'

अपनी नाटक की कला दिखाने को आजकल लोग बहुत कुछ करते हैं। बड़े-बड़े संस्कृत के श्लोक बुलवाते हैं , अंग्रेजी के वाक्य बुलवाते हैं, उर्दू के शेर कहलवा देते हैं, गोस्वामीजी ने ऐसा नहीं कहा है। अगर चौपाई है तो उसका सीधा-सादा अर्थ जो हमारे भक्त दर्शक के समझ में आ जाए, ऐसा गद्य में कहना। अर्थ समझ में आ जाए। दर्शक भी लीला में कई प्रकार के होते हैं, खासकर रामनगर में तो उनकी बाकायदा श्रेणी बना दी गयी है। एक होते हैं नेमी। वह संकल्प करके तीस दिन लीला देखते हैं। उनको विशेष स्थान दिया जाता है, उनका विशेष रूप है और अगर विदेशी भी चाहें तो वह भी नेमी हो सकते हैं। डा० लिण्डा हेस (अमेरिका) ने तीन वर्ष तक नेमी बनकर लीला देखी। और दूसरे जो होते हैं प्रेमी। और प्रेमी भी तरह-तरह के हैं कुछ आज गये तो हम धनुष-यज्ञ देखेंगे, फिर अंगद-विस्तार देखेंगे, फिर यह देखेंगे इत्यादि। और कुछ प्रेमी ऐसे हैं जो कि रात को नौ बजे घर से निकलते हैं, सीधे रामनगर जाते हैं आरती का दर्शन करने। उनको कुछ और नहीं देखना है। और बाकी लोग हैं हमारे जैसे कि हाँ भइया, लीला हो रही है चलो एक दिन देख लें बहुत लोग आते हैं कि रामनगर की लीला दिखा दो। उनको कोई रस नहीं है। एक आदमी तो बोले 'साहब यह क्या फूहड़ लीला हो रही है, इसमें कुछ है क्या'? 'नहीं भई

नहीं है '। ठीक पाँच बजे लीला आरम्भ होती है, छ: बजे महाराज काशी नरेश सन्ध्या-वन्दन को जाते हैं। छ: से सात तक, यह एक घण्टे का जो अन्तराल है इसमें दो चीजें होती हैं। एक तो मेला होता है, कोई रेवड़ी खरीद रहा है, कोई कुछ कर रहा है, बातचीत हो रही है, कुछ लोग कीर्तन करते हैं। बहुत अच्छा कीर्तन होता है। सैकड़ों साधु-सन्त आते हैं। कुछ लोग भगवान् के चरण में बैठे रहते हैं। वह सुख उनको लीला के समय में नहीं मिलेगा जो उस वक्त एक घण्टे में मिल जाता है।

कला-कौशल में इस राम-कथा ने सारे कलाकारों को प्रभावित किया है। आप पत्थरों पर उत्कीर्ण मूर्तियों में, टेराकोटा में और चित्रों में, लोक चित्रों में, खिलौनो में, वस्त्र पर, मुकुट, मुखौटे, सभी जगह कला के दर्शन कर सकते हैं। दूसरी ओर इसी राम-कथा ने हमारे लोक-नाटक को भी बहुत प्रभावित किया। आपने कुड़िअट्टम में देखा, कथकली में देखा, इन सब में राम-कथाएँ आती हैं। और 'यात्रा' हैं। पुतली नाटक बहुत व्यापक हैं उड़ीसा में, दक्षिण केरल और कर्णाटक सब जगह पुतली-नाटक हैं। वह एक बहुत विस्तार की बात है। और रावण-छाया उड़ीसा में होती है। 'भवाई' का तो नाम ही था 'राम-वेश '। नौटंकी में, हाथरस की नौटंकी का धनुष-यज्ञ मैंने देखा, बहुत अच्छा करते हैं। 'अंकिया नाट' में भी राम-कथा होती है। एक और बहुत अद्भुत विधा मध्य प्रदेश में है 'रामायनी '। 'पण्डवानी' शायद आपलोगों ने देखी होगी। 'रामायनी' एक काव्य है। मजेदार बात यह है कि वह हमारी इस रामायण से सम्बन्धित नहीं लगती। आदिवासी लोग हैं, वहाँ के लोगों की बात है। उसमें कहते हैं लक्ष्मणजी बड़ा आनन्द लेते थे। उच्छृंखल हो गये थे। रामजी को पता लगा तो उन्होंने पाण्डवों को बुलाया। जरा देखिएगा। पाण्डवों को बुलाया कि जरा देखो, नजर रखो, इसका पता लगाओ कि यह क्या करता है। और लक्ष्मणजी बड़े बेदाग उसमें से निकले। कहा 'नहीं सच्चे, सच्चरित्र हैं, बड़ा अच्छा है '। यह रामायनी गायी जाती है, पण्डवानी की तरह से, यह कथा कही जाती है। नाम उसका 'रामायनी' है इसलिए ध्यान मेरा उधर गया। और विदेश में आप देखिये, तो श्रीलंका में थोड़ी-बहुत होती है। उनके लकड़ी के मुखौटे बड़े अच्छे हैं। हमें बनारस के मुखौटों में श्रीलंका के लकड़ी के मुखौटों की झलक देखने को मिली। उदय शंकरजी ने 'लंका-दहन' नाटक जो किया था उसमें इन मुखौटों का प्रयोग किया था। वो फोटोग्राफ हैं मेरे पास। शूपनखा का तो बिल्कुल लगता है जैसे वहाँ से उठा लाए। बर्मा यानि म्यांमार, वहाँ 'जाटप्वे', 'योकथे प्वे' दो-तीन नाटक ऐसे होते हैं। कम्पूचिया में 'लाकन खाच बोरान', 'खोन', 'नांगशेक', इण्डोनेशिया में 'वायांगकुलित'। 'वायांग' नाम से बहुत तरह-तरह के शैडो प्ले, पुतली-नाटक सब होते हैं।

'वायांग' में गोलेख, ओरांग, पूर्वा, तोपेंग। 'सान्द्रा तारी' में एक रामलीला ही होती है पूरे चार दिन की। एक 'बेरांग' होता है, 'अर्दजा' होती है। लाओस में मजेदार बात यह है कि मुस्लिम राज्य है। और उन्होंने आदम को भी इस रामायण में डाल दिया है। बहुत गड़बड़ मामला है वहाँ पर सब। ऐसे पूरी रामायण ही उनकी थोड़ी विकृत हो जाती है। हनुमान्‌जी उनके मुख्य पात्र हो जाते हैं लेकिन यहाँ उनके जो राज-परिवार के लोग हैं उस राम-कथा में भाग लेते हैं। कभी राम पक्ष के पात्र बनते हैं, कभी रावण पक्षके बनते हैं, लेकिन भाग लेते हैं। थाईलैण्ड में 'खोन', 'नांग्याई'। इसके अलावा योरप को भी राम-कथा ने इतना प्रभावित किया कि जर्मनी में नाटक हुआ। उसका पूरा विवरण मेरे पास है। मजेदार बात आपके सुनने की है कि उसमें जो पात्र राम का अभिनय कर रहा था वही रावण का भी अभिनय कर रहा था। जिसने सीता का अभिनय किया था उसी ने शूपनखा का भी अभिनय किया था। उसके डाइरेक्टर ने कहा कि यह तो हमारे ही दोनों पक्ष हैं। एक हमारा अच्छा पक्ष है राम का, एक हमारा बुरा पक्ष है रावण का। तो बड़ी मजेदार, बहुत अच्छी लीला हुई थी।

इसी तरह से सोवियत रूस में और खास कर बच्चों के लिए राम-कथा कही गयी। बड़ी भव्य थी और बच्चे उसमें कितनी रुचि लेते थे कि जब सीताजी का हरण होने वाला है और लक्ष्मणजी द्वारा खिंची हुई रेखा को पार करने वाली है तो सारा हॉल चिल्लाता है 'नहीं, नहीं, मत जाओ, मत जाओ, मत जाओ, बाहर मत जाओ'। इतना उत्तेजित हो जाते थे बच्चे।

चित्रकूट के घाट पर भइ संतन की भीर।
तुलसिदास चन्दन घिसें, तिलक देत रघुबीर॥

यह जगह है वहाँ पर मन्दाकिनी तट पर। और संत ने पहचाना नहीं। बहुत दु:खी हुए बाद में। एक तो यह है। कुछ लोग कहते हैं ऐसा अयोध्या में हुआ। मेघा भगतजी भी अयोध्या जाते थे। उनको, वहाँ प्रभु घोड़ेपर जा रहे थे और तीर-धनुष दे गये। आज भी आत्मावीरेश्वर के मन्दिर में, संकठाजी के पास एक दिन चित्रकूट की लीला होती है, धनुष-बाण की झाँकी। कहते हैं वही धनुष-बाण है, रखा हुआ है। एक अद्भुत प्रसंग चित्रकूट-रामलीला के साथ हुआ था जो रेकॉर्डेड है। मैकफर्सन नाम का एक पादरी था। लीला आप जानते हैं अभी भी वहीं होती है चौकाघाट पर। वहाँ अंग्रेजों के मकान बने हुए थे। उनको बड़ी चिढ़ होती थी कि क्या देहाती नाटक होता है, बन्द करो। उसको कोई आधार चाहिए था सो उसने आकर कहा कि देखो, तुम्हारा जो हनुमान् था एपिक का, वह चार सौ योजन कूद गया था। यह वरुणा है, बढ़ी हुई वरुणा है, तुम इसको कूदेगा

तो रामलीला करेगा, नहीं तो नहीं करेगा। हनुमान्‌जी ने, जो टेकराम भट्ट थे, उनका परिवार आज भी है काशी में, उन्होंने रामजी से पूछा कि प्रभु क्या आज्ञा है ? उन्होंने कहा, कूद जाओ। और टेकराम भट्ट कूद गये। चालीस हाथ चौड़ी वरुणा कूद गये। दो कथाएँ हैं कि उस पार गिर कर मर गये और दूसरी कथा है कि भरत-मिलाप के दिन तक जीवित रहे, प्रभु के दर्शन कर के गये। जो भी हुआ हो। उनका मुकुट, उनके वस्त्र, सब समाधि रूप में चित्रकूट मन्दिर में रखे हैं। हनुमान्‌जी की वरुणा की ओर देखते हुए बड़ी अद्भुत मूर्ति है वहाँ और रामजी उनको आज्ञा दे रहे हैं, उनकी भी प्रतिमा वहाँ है। यह एक प्रसंग काशी की चित्रकूट-रामलीला का एक गौरव है। अब हम आते हैं रामलीला के प्रदर्शन पर।

अभी मैने आपसे चर्चा की कि सन् १५४३ में झाँकी-लीला वैष्णव परम्परा में होती थी। तुलसीदासजी ने लोक-नाट्य संवाद शैली में अभिनटन-लीला की १५७४ में। और विश्व की अद्भुत लीला रामनगर की है। इसको मैंने नाम दिया है घटित-लीला - यह बस होती है। यहाँ कोइ दर्शक नहीं है। रामनगर में कोई दर्शक नहीं होता। मैंने देखा है एक कोठरी में बैठ कर रामजी नारदजी से बात कर रहे हैं। अब यह कौन सी लीला है ? मगर होती है, रामजी को यह चिन्ता है कि मुझे नारद से बात करनी है, मुझे अंगद से बात करनी है, मुझे हनुमान् से बात करनी है। उनको इससे कोई मतलब नहीं है कि दर्शक देख रहे हैं या नहीं। हमारे नाटक में बार-बार कहा जाता है- दर्शक को देखो - फेस द ऑडियेंस - यहाँ यह बात नहीं है। आप वहाँ जाइयेगा रामनगर में तो दर्शक नहीं कुछ और हो जाइयेगा। अवध में रहियेगा तो अवधवासी हो जाइयेगा। रामजी की बारात जा रही है तो बाराती हो जाइये । लंका में अंगद-संवाद हो रहा है तो रावण के दरबारी बन जाइये। राम वन जा रहे हैं तो आप वनवासी बन जाइये, साथ-साथ चलिए। दर्शक तो नही होता वहाँ। यह अद्भुत लीला है। इतना बड़ा विस्तार, पूरा एक बीस वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र रामलीला का मंच बन जाता है।

मैं एक मंच आपको दिखाता हूँ। किले की दीवार पर जानकीजी बैठी है, अशोक वाटिका में। उससे करीब-करीब एक किलोमीटर की दूरी पर सिंहासन है जिसपर रावण बैठेगा, रावण का दरबार है। उससे एक किलोमीटर उघर जाइये तो रावण का महल है जहाँ वह नाच-गाना देख रहा है। और करीब एक किलोमीटर दूर सुवेल पर्वत है जिस पर रामजी बैठे हैं। जरा अंदाज लगाइये। आप एक साथ चारों चीज नहीं देख सकते। बहुत सी औरतें तो सीताजी के पास ही बैठी रहती हैं उस दिन। वहाँ हजारों आदमी रावण के दरबार में बैठे रहते हैं, कुछ लोग जहाँ नाच-गाना रावण

के यहाँ होता है, वहाँ रहते हैं और अंगद सुवेल पर्वत से पैदल चल कर रावण के दरबार तक आते हैं। आपने क हीं ऐसा मंच देखा है ? इतना बड़ा मंच। वहाँ बनारस की और लीलाओं में भी स्थल परिवर्तन होता है प्रति दिन। आज अवध की लीला है तो अवध में होगी। आज फलानी लीला है तो वहाँ चौकाघाट पर होगी। लेकिन रामनगर में एक ही दिन में कई स्थल परिवर्तन हो जाते हैं। भरतजी चित्रकूट से राम की पनही लेकर चलते हैं करीब-करीब दो-ढाई किलोमीटर पैदल यात्रा कर के आते हैं अवध में, पादुका स्थापित करते हैं फिर एक चार सौ गज दूर नन्दीग्राम में आकर ठहरते हैं, वहाँ उनकी आरती होती है। डॉ. लिंडा हेस ने लिखा कि किसी-किसी दिन तो हमारे पैर में छाले पड़ जाते थे, क्यों, पगडंडियों में, जहाँ सड़क नहीं है, उसमें भी चलना पड़ता है। यह एक अद्भुत बात है।

अब पात्र चयन की बात मैंने कही थी। मैं आपके सामने शिव-संहिता के पंचम पटल के पन्द्रहवें अध्याय का एक श्लोक पढ़ना चाहता हूँ -

द्विजराज-कुलोद्भूतं सुरूपं सुमुखादिकम्। सुवर्ण सुभगं चारुचेष्टं मधुरभाषिणम्।
दृष्टिचित्तहरं पुंसां शिक्षादत्तसुलक्षणम्। कुमारं वा किशोरं वा रोगदोषविवर्जितम्। .....

कैसे बालक चुने जाते हैं ? सुन्दर होने चाहिए, ब्राह्मण के बालक होने चाहिए, अच्छी वाणी होनी चाहिए, ये सब पढ़े-लिखे होने चाहिए, समझदार होने चाहिए। आज भी सब से कम उम्र के बालक चुने जाते हैं चित्रकूट में, थोड़ी-सी अधिक उम्र के अस्सी में, थोड़ी सी और अधिक उम्र के रामनगर में। सब लड़के होते हैं, लड़कियाँ नहीं ली जाती हैं। और बाकी सब जगह एक मजेदार बात यह भी जानने की है कि चित्रकूट में और अस्सी पर लीला होती है - आदौ रामतपोवनादि गमनम् यहाँ से लीला शुरु होती है। और - 'रावणकुम्भकर्णादिहननं एतद्धि रामायणम्' , वहाँ खत्म होती है बाइस दिन की लीला। मगर रामनगर की लीला रावण-जन्म से आरम्भ होती है। उससे पहले नौ-दस दिन रावण राज्य करने लगा यहाँ तक चौपाइ आ जाती है, वहाँ तक, रामायण का पाठ होता है बालकाण्ड से और तब लीला आरम्भ होती है और लीला यहाँ समाप्त होती है कोट बिदाई से। इसमें लक्षमणजी पीलवान बनते हैं, रामजी हाथी पर बैठते हैं, शत्रुघ्नजी हाथी चलाते हैं, भरतजी बैठते हैं और ये लोग किले में जाते हैं। किले में इनकी पहुनाई होती है। राजा बनारस इनके पैर धोते है, भोजन कराते है, प्रणाम करते हैं और उनकी विदाई करते हैं। यह अद्भुत संयोग है।

ऐसा रामनगर में एक और संयोग है कि जिस रोज शस्त्र-पूजा होती है दशमी को, उस दिन एक सवारी निकलती है। अब वही जो मैं 'समय गायब हो जाता है' इसकी बात कर रहा था कि राजा की सवारी सीधे रामजी के कैम्प में जाती है और वे रामजी को बधाई देते हैं। जिस दिन सीता-हरण होता है महाराज काशी नरेश उस लीला में उपस्थित नहीं होते। जिस दिन रावण-वध होता है उस रोज भी महाराज वहाँ नहीं जाते। क्योंकि राजा के लिए यह उचित नहीं है कि किसी स्त्री का हरण होते देखे। यहाँ रहे तो उनको सक्रिय होना होगा। इसलिए वह वहाँ नहीं जाते। ये अतीत को वर्तमान में जोड़ने की प्रक्रिया है।

प्रत्येक राम लीला मण्डली अपने लीला कार्यक्रम की सारिणी निकालती है अर्थात् किस दिन कौन सी लीला होगी। वास्तव में काशी की सभी रामलीलाओं में एक-रूपता है विशेष रूप से मंच विधान में। यहाँ स्पष्ट कह दूँ कि चित्रकूट और रामनगर के मंच विधान भिन्न हैं और अस्सी एवम् नगर की मान्य लीलाओं के अलग। नाटक का विद्यार्थी होने के कारण मुझे मंच-रचना में विशेष रुचि रही है।

यहाँ थोड़ा विषयान्तर करके कहना चाहूँगा कि सन् १९६० में जब मैंने नाटक में विशेष रुचि लेनी आरंभ की तो दो विषयों पर विशेष चर्चा हो रही थी । एक तो यह कि अभिनेता और दर्शक के बीच विभाजन रेखा कैसे तोड़ी जाय, प्रयोग हो रहे थे अभिनेता मंच से उतर कर दर्शक दीर्घामें जाते थे या कुछ अभिनेता दर्शक दीर्घा से उठकर मंच पर आ जाते थे, पर रेखा टूट नहीं रही थी। दूसरी चर्चा थी - भ्रम की - इल्यूज़न की। पुराने नाटक में दर्शक को सम्मोहित सा करके दृष्टिभ्रम पैदा करते थे और दर्शक वस्तु स्थिति से दूर हो जाता था। जब मैं रामलीला का अध्ययन करने लगा तो मुझे दोनों समस्याओं के समाधान मिल गये। गोस्वामी जी ने चार घाट की लीला की चर्चा की है। तुलसी मंच की रचना में दर्शक अभिनेता विभाजन रेखा होती ही नहीं और लीला में बार बार सचेतक दर्शक को बताता चलता है कि यह लीला है और फलाँ अभिनेता संवाद बोलेगा अर्थात् भ्रम होने का प्रश्न ही नहीं। और इसके बावजूद दर्शक का लीला से अभूतपूर्व तादात्म्य रहता है।

बचपन में मैने शिवपुर में जो लीला देखी थी उससे मुझे तुलसी मंच का स्वरूप स्पष्ट हुआ क्योंकि तुलसी घाट पर ऐसा मंच नहीं है (होना चाहिये) और नगर की अन्य लीलाएँ लीला की अवधि में अस्थायी रूप से ऐसा मंच बना लेती है। किंवा यह मंच - तुलसी-मंच नाटक की दृष्टि से अद्भुत है। इस मंच में आयताकार मैदान में उत्तर की ओर एक सात सोपान ऊँचा मंच बनाकर

उस पर सिंहासन स्थापित करते हैं - यह है **विष्णु मंच** (यह मेरा दिया नाम है)। मैदान के दक्षिण में पाँच सोपान ऊँचे मंच पर सिंहासन स्थापित करते हैं - यह है **राज-मंच**। पूर्व में दो या तीन सोपान का मंच बनता है जिसे **देवी-मंच** की संज्ञा दे सकते हैं और पश्चिम में एक सोपान का चबूतरा **जन-मंच** होता है। विष्णु मंच और राज मंच को जोड़ता एक गलिहारा होता है और आवश्यकता होनेपर देवी मंच से एक गली उत्तर दक्षिण मार्ग से जुड़ जाती है। इस उत्तर दक्षिण मार्ग को मैं **जीवन-पथ** कहना चाहूँगा। अब नक्शे पर गौर करें, चार मंचों के बीच जो स्थान है उसमें दर्शक बैठ जाते हैं। कह सकते हैं कि मंच पर ही दर्शक दीर्घा बन जाती है। यहाँ दो अन्य मंचों की भी बात कह दूँ - धनुष यज्ञ लीला में राज मंच और जन मंच के बीच एक ऊँचा मंच बनाते हैं जिस पर शिव धनुष रक्खा जाता है क्योंकि राज आश्रय में यह सार्वजनित चुनौती है और दूसरा मंच **भरत-मंच** है, जब वे नंदीग्राम में वास करते हैं, यह मंच देवी मंच और विष्णु मंच के बीच बनाना चाहिये क्योंकि भरत केवल भक्त नहीं - प्रेम पयोधि हैं, प्रभु के सर्वाधिक निकट हैं। (नक्शा संलग्न)

अद्‌भुत और अर्थपूर्ण है यह चार मंच की रचना । मुझे इसमें बहुत कुछ दिखा है। विष्णु मंच पर केवल स्वरूप और गुरु विश्वामित्र विराजते हैं, राज-मंच पर कथा के सभी राजा, दशरथ, जनक, बाली, रावण बिराजते हैं, देवी-मंच पर रनिवास और अशोक वाटिका बनती है और जन-मंच रामायणी के लिये होता है। अब अर्थ ढूँढें तो विष्णु-मंच मोक्ष और वैराग्य का मंच है, यहाँ शिवजी पार्वती को कथा सुनाते हैं। राज-मंच ज्ञान और अर्थ का मंच है जहाँ याज्ञवल्क्य भरद्वाज को कथा सुनाते हैं, देवी-मंच काम और भक्ति का मंच है जहाँ काकभुशुण्डी गरुड़ को कथा सुनाते हैं और जन-मंच धर्म कर्म का मंच है जहाँ तुलसी भक्तों को कथा सुनाते हैं। जीवन पथ-प्रभु तक ले जाने वाला मार्ग है ज्ञान मार्ग से, भक्ति मार्ग से और कर्म मार्ग से प्रभु तक पहुँचा जा सकता है। ज्यों ज्यों मैं तुलसी मंच की रचना देखता हूँ मुझे बहुत कुछ दिखने लगता है। उत्तर में हिमालय, दक्षिण में कन्याकुमारी, पूर्व में द्वारिका और पश्चिम में पुरी दिखती है। इसी प्रकार उत्तर में आत्मा, पूर्व में हृदय, पश्चिम में शरीर और दक्षिण में मस्तिष्क । विष्णु मंच कहता है समर्पण करो, राज मंच कहता है ज्ञान प्राप्त करो, देवी मंच सेवा की प्रेरणा देता है तो जन मंच कर्म करने को प्रोत्साहित करता है। यह लीला के लिये ही नहीं नाटक के प्रयोग के लिये भी अद्भुत मंच है। अहमदाबाद में श्रेयस संस्थान में श्रीमती लीना साराभाई ने तुलसी मंच बनवाया और उसपर नाट्य प्रयोग भी किये।

इस मंच की एक झलक और देखें। रामलीला में बिजली की, मंच प्रकाश की व्यवस्था

नहीं होती, न ध्वनि विस्तारक होता है। लीला संध्या समय होती है। रोशनी गैस बत्ती या महताबी की होती है। ऐसे में विष्णु मंच पर सुनहले मुकुटधारी स्वरूप बैठे हैं, दूसरी ओर राज मंच पर रुपहले मुकुटधारी राक्षस राज रावण विराजमान हैं। बीच में दर्शक हैं, नर मुंडों का समुद्र है। ऊपर देखिये तो लगेगा आकाश में देव दानव संग्राम हो रहा है। एक और बात की गलियारे के दोनों ओर दर्शक बैठते हैं तो लीला के समय उस पथ से आते जाते बंदर, राक्षस और अन्य पात्रों को वे निकट से देख सकते हैं, छू सकते हैं। इतना तादात्म्य कहाँ मिलेगा ? फिर रामलीला में एक और भी विधा है जब स्वरूप संवाद बोल लेते हैं तो जयकारा लगता है - बोल दे राजा रामचन्द्र की जय, यह भी तादात्म्य स्थापित करने में सहायक होता है। अन्य पात्र भी कौन होते हैं ? जिस मुहल्ले में लीला होती है वहीं के लोग ? छोटे लड़के राक्षस या बंदर बन जाते हैं। युवक और बुजुर्ग अन्य भूमिकाएँ करते हैं। दर्शक जानते हैं यह जो हनुमान् बने हैं, वे कपड़े की दुकान में काम करते हैं, यह रावण दिन में हलवाई का काम करता है। अर्थात् अपने ही लोग हैं। बाकी स्वरूप है जो चयन किये गये हैं और पूज्य हैं। इतना अपनापन नाटक में कहाँ मिलेगा ? मजे की बात तो यह है कि कुछ लोग तो पुश्त दर पुश्त भूमिका-विशेष करते हैं और बहुधा उनका मूल नाम गायब हो जाता है और वे रामलीला के नाम से सुख्यात हो जाते हैं। काशी में आपको कई हनुमान्जी, सुग्रीव, कुंभकरण मिल जायेंगे। यही हाल स्थल का भी है, वे भी लीला के नाम से जाने जाते हैं जैसे लंका, अवध, पंचवटी आदि।

तुलसी मंच की डिजाइन की बात हमने की। काशी की दूसरी और सबसे पुरानी लीला है चित्रकूट की। यहाँ की लीला का इतिहास पहले बता चुका हूँ। वैष्णव मेघा भगत ने वैष्णव मंन्दिरों की प्रथा के अनुरूप इस झाँकी लीला का विधान किया। यहाँ मंच विधान की बात व्यर्थ है फिर भी भरत मिलाप में विष्णु मंच, राज मंच, जन मंच के दर्शन हो जाते हैं, देवी मंच के स्थान पर काशी नरेश दिखते हैं जो शिव शंकर का प्रतिनिधित्व करते हैं। दूसरी लीला राम नगर की है। इसे मैं घटित लीला कहना चाहूँगा। यहाँ भी मंच विधान नहीं होता।स्थान विशेष पर पात्र अपनी भूमिका करते हैं।

अब मैं लीला के अन्य अंगों की चर्चा करूंगा।

शृंगार - नाटक में हम पात्र का मेकअप करते हैं पर रामलीला के स्वरूपों का मेकअप नहीं शृंगार होता है। अन्य पात्र मेकअप नहीं करते। यद्यपि आजकल कई लीलाएँ नौटंकी स्टाइल में मेकअप का सहारा लेती हैं। बंदर और राक्षस पात्र तो मुखौटे लगा लेते हैं बाकी राजा जनक, दशरथ, साधु महात्मा ऋषि दाढ़ी मूँछ लगा लेते हैं। स्त्री की भूमिका पुरुष करते हैं जो साड़ी में मुँह

छिपाये रखते हैं। शृंगार एक विशेष कला है और हर लीला के सिंगारिया की अपनी शैली है। रामनगर में स्वरूप के मुख पर चमकी से फूलपत्ती बनाते हैं, चित्रकूट में रामरज, चंदन आदि से सिंगार होता है और खूब मोटी तुलसी माला स्वरूप को अनूठी दिव्य शोभा प्रदान करती हैं। रामनगर में कुछ बंदरों का नारियल की जटा से और काले रंग से सिंगार करते हैं, वे मुखौटे नहीं लगाते।

वेशभूषा -रामलीला की वेशभूषा का विशेष अध्ययन करना है। कुछ पहाड़ी, खुछ राजस्थानी और कुछ मुगल कालीन वेषभूषा दिखती है।

संवाद - रामलीला में संवाद बोलने की शैली कुछ कुछ केरल के कुडिअट्टम से मिलती है। वे एक एक अक्षर धीरे धीरे प्रक्षेपित करके बोलते हैं। याद रहे, यहाँ कोइ नेपथ्य नहीं है, स्वरूपों के पास सिंगारिया जी उपस्थित रहते हैं, जरा सा गड़बड़ हुआ कि ठीक किया। व्यास जी रजिस्टर लिये जिस भी पात्र का संवाद है उसके पास पहुँच जाते हैं। यहाँ पार्ट याद रखने की बात नहीं, जैसा निर्देशक धीरे धीरे बताते हैं पात्र जोर से बोलता है। मजे की तकनीक यह है कि एक पात्र संवाद बोल लेता है तो दूसरा उत्तर नहीं देता बल्कि रामायण पाठ होता है। जहाँ पाठ रुका कि सचेतक जोर से बोलते हैं - चुप रहो, सावधान, अब रघुनाथजी का संवाद होगा। चारों ओर सन्नाटा छा जाता है। पात्र सम्वाद बोलता है। तब व्यासजी आवाज देते हैं - राम आसरे भइया और रामायणी पाठ करने लगते हैं। वे रुकते हैं तो दूसरे पात्र का संवाद होता है। हर बार जैकारा होता है आजकल कुछ लीला मण्डलियाँ माइक, लाइट का प्रयोग करने लगी हैं, संवाद भी नाटक की भाँति उत्तर प्रत्युत्तर में होते हैं जिससे लीला का स्वरूप बदला है। ऐसा विधान क्यों हुआ यह भी समझने की बात है। हमारी जनता भोली-भाली अपढ़ थी अस्तु धीरे-धीरे बात कही जाती थी कि समझ में आ जाए। दूसरे हमारी बतियाने की आदत है अस्तु दो संवादों के अंतराल में वे बातें भी कर लेते थे।

आरम्भ में मैंने मतिभ्रम इल्यूज़न की बात कही थी। इस भ्रम तोड़ने का बहुत अच्छा उदाहरण मानस में मिलता है। सीता-हरण के बाद राम वन में सीता को खोज रहे हैं तभी शिव आते हैं और आपस में प्रणाम बन्दगी होती है। सती साथ में हैं। यह क्या - एक साधारण मानव रो रहा है बिलख रहा है उसे शिव शंकर प्रणाम कर रहे हैं ? वे नहीं समझतीं कि प्रभु नरलीला कर रहे हैं, कविवर यहाँ मनहु महाकामी का प्रयोग करते हैं। मनहु शब्द बताता है यह लीला है। सती परीक्षा लेने चलती हैं और यहाँ चूक हो जाती है। वे राम को भ्रमित करने हेतु सीता का रूप धारण

करती हैं। पर राम उनसे पूछते हैं कि आपके नन्दीश्वर कहाँ गये ? भ्रम टूटता है और एक और बड़ा भ्रम दिखता है - सैकड़ों राम लक्ष्मण सीता आ रहे हैं। देवी सती वहाँ से भागती हैं। वे इतनी भ्रमित हो गयी हैं कि झूठ बोलना पड़ता है। रामलीला में भ्रम को स्थान ही क्यों हो यह तो संशय विहग उड़ावन हारी कथा है।

संगीत नृत्य - रामलीला में संगीत नारद-बानी में रामायण पाठ तक सीमित है। रासलीला में संगीत और नृत्य का विशेष स्थान है। रामलीला में केवल कहीं-कहीं राजगद्दी के समय नाच गाना कराते हैं पर इसका रामलीला से सम्बन्ध नहीं है।

प्रकाश - पहले कह चुके हैं कि रामलीला में गैस बत्ती, महताबी, मशाल की रोशनी होती है। इसका यह कारण यह भी है कि वर्तमान का हजारों पावर का विद्युत प्रकाश किया जाय तो बरसात के महीने में कीड़ों की जो वर्षा होगी उसमें कोई भी बैठ नहीं सकेगा। फिर राम-नगर की रामलीला में, जो अपार विस्तार में और खुले मैदान में होती है, उसमें थियेटर लाइट लगाना सम्भव ही नहीं होगा और न कोई उसका खर्च वहन कर सकेगा।

मुखौटे - रामलीला के मुखौटे विशिष्ट हैं और करीब २२ मुखौटे प्रयुक्त होते हैं लुगदी पीतल और कपड़े के बने। रासलीला में केवल एक हाथ का प्रतिरूप प्रयुक्त होता है। एक और मुखौटा गौ का भी इस्तेमाल होता है। इसलिए यदि, जैसा कहते हैं रासलीला की देखा देखी रामलीला का उद्भव हुआ है तो फिर ये मुखौटे कहाँ से लिये गये ? बनारस की रामलीलाओं के मुखौटे सुन्दर हैं। किन्तु मुखौटे बनाने वालों की संख्या घटती जा रही है। कपड़े के शानदार मुखौटे जैसे रावण के मुखौटे बनानेवाले लुप्त हो गये हैं। पीतल के मुखौटे - काली-दुर्गा, हनुमान् और खरदूषण के केवल कुछ ही धातु काम करनेवाले बनाते हैं। लुगदी के मुखौटे बनाने वालों के कुछ ही परिवार बच गये हैं। इन पारंपरिक मुखौटों का स्थान प्लास्टिक के मुखौटे ले रहे हैं। हनुमान् का पीतल का मुखौटा केवल काशी की रामलीला में ही इस्तेमाल होता है। हनुमान्जी के मुखौटे बहुत वजनी होते हैं, रामनगर के हनुमान् का मुखौटा ७ किलो का है। इसी प्रकार काली दुर्गा के मुखौटे भी बहुत वजनी होते हैं और पूजा अर्चना करने के बाद ही तिलंगे इन्हें उठाते हैं। गायघाट रामलीला मंडली के पास बंदरों के ऐसे ही विशाल मुखौटे हैं और साथ ही विशेष भव्य वेशभूषा भी है। हनुमान् के मुखौटे पर सोने का पत्तर चढ़ा है। चित्रकूट रामलीला के मुखौटे कुछ अलग डिजाइन के हैं और सुन्दर हैं। मुखौटे के संबंध में एक बात कहना चाहूँगा कि काशी में अनेक हनुमान् मन्दिर हैं, पर हनुमान् के मुखौटे का स्वरूप इनसे भिन्न है। यह रूप कहाँ से आया ? जब

मैं दक्षिण में शुचिन्द्रम मन्दिर में गया तो वहाँ १२ फुट ऊँची हनुमान् प्रतिमा है और उसका रूप वही है जो बनारस के मुखौटे का। क्या गोस्वामीजी यहाँ से यह रूप ले आये थे ? इसी प्रकार कटक (उड़ीसा) के देवी मुखौटौं और बनारस के काली दुर्गा मुखौटों का साम्य भी आश्चर्य चकित करता है। रावण और राक्षसों के कपड़े के डिजाइनों वाले मुखौटे कैसे बने ? एक बार स्व. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्रजी से पूछा तो बहुत हँसे - बोले अरे यह प्रश्न कहाँ से ले आया ? फिर गंभीर होकर बोले - शायद ये नवाबों और बादशाहों के कार्टून हैं। अक्सर शाम के धुँधलके में ताड़ के वृक्षों को देखता हूँ तो राक्षसों के मुखौटों की आकृति झलकने लगती है। मुखौटे गहन शोध का विषय हैं।

दृश्य-बंध - रामलीला खुले मैदान में होती है अस्तु उसमें परदे और सेट्स नही होते। हाँ पुश्त होते हैं। ये कागज और बाँस से बनते हैं। रावण, कुंभकरण, सुरसा के विशाल पुतले आपने देखे होंगे। इसके अलावा नन्दी, हंस, रथ, घोड़े, शेषनाग आदि बहुत कुछ बनता है। धनुष यज्ञ में शिवधनुष भी बड़ी तरकीब से बनाते हैं जो छूते ही तीन टुकड़े हो जाता है। नोट करने लायक बात यह है कि इनके बनानेवाले कारीगर मुसलमान हैं जो ताजिया भी बनाते हैं। चारों फाटक की लड़ाई में रंगीन कागजों से जो लंका के फाटक बनते हैं उनका ताजिया से बहुत कुछ साम्य रहता है। किसी ने कहा रामलीला मुहर्रम की बेटी है, आप इसका उलटा भी कह सकते हैं। बात है दो सम्प्रदायों में बीच अटूट संबंधों की। मुझे याद आती है एक कहानी जिसमें मुसलमान कारीगर कितनी निष्ठा से रावण बनाता है और अन्त में वर्षा से बचाने के लिए छाता ताने खड़े रहे रावण के सिर पर , मर गये पर रावण को नष्ट होने नहीं दिया। मुसलमान थे पर भक्त भी थे। कोई शक नहीं किसी भी मजहब में राम भक्त मिल जायेंगे। दृश्य बंध की बात आई है तो तुलसी मंच के भिन्न ऊँचाई के चबूतरे मध्य युगीन पेंटिंग जैसे बहुआयामी चित्र बनाते हैं। साथ में दर्शकों की भीड़ में रंग बिरंगे वस्त्र पहिने नर-नारी चित्र को अभूतर्पूव रंगो से भर देते हैं। भरत मिलाप में पश्चिम की ओर एक बाड़ा बनता है जिसमें महिलाएँ बैठती हैं रंग बिरंगी साड़ियों से भरा यह स्थान एक अपूर्व चित्र उपस्थित करता है।

गतियाँ - नाटक में गतियों - मूवमेंन्ट्स की काफी चर्चा होती है। रामलीला में नाटकीय गतियाँ ढूँढ़ना व्यर्थ होगा। मान लेने की बात प्रमुख है। हनुमान्जी पहाड़ लेकर गलियारे में एक स्थान से दूसरे स्थान पर कूदे माने उड़कर आ गये। रामलीला मैदान के पास तालाब होता है तो उसमें नौका से इधर उधर उतर गये। रामनगर में तो छोटा सा तालाब है उस पर पटरे रखकर सेतु बना लेते हैं। इसी सिलसिले में मजेदार बात बताऊँ। रामनगर में सीताजी एक ऊँचे स्थान पर बैठी

हैं - नीचे हनुमान् खड़े हैं। माता पूछती हैं, इतने छोटे बन्दर कैसे रावण से लड़ेंगे, तो हनुमान् कूद कर चबूतरे पर खड़े हो जाते हैं और इस प्रकार उनका विशाल रूप प्रगट हो जाता है। अस्सी पर गोस्वामीजी की रामलीला में दो हनुमान् होते हैं। बाल हनुमान् सीताजी के प्रश्न करने पर छिप जाते हैं और वयस्क हनुमान् सामने आ जाते हैं। कुछ गहरे उतर कर देखेंगे तो आपको बहुआयामी गतियाँ नजर आयेंगी। जैसा कि पहले कहा यहाँ टाइम और स्पेस की टलीस्कोपिंग हो जाती है और असर होता है सिनेमास्कोपिक और स्टीरियोफोनिक । थियेटर की भाषा में यहाँ जक्सटापोजीशन ऑफ डिफरेंट सीन्स भी देखने की चीज़ है।

आरती - रामनगर की रामलीला में आरती का बड़ा महत्त्व है। प्रतिदिन उसकी अलग छटा होती है। हर बार कोई अलग पात्र आरती करता है। राजगद्दी के दिन शाम को राज्याभिषेक होता है, बानर विदाई होती है। यहीं लीला रुक जाती है। नगर में दिवाली होती है और लोग जहाँ स्थान मिलता है सो जाते हैं। अलस भोर में कौशल्या माता आरती करती हैं, स्वयं काशी नरेश भी उपस्थित रहते हैं। सूर्योदय के समय इस लीला की शोभा अद्भुत होती है। अन्यत्र कहीं आरम्भ और अन्त में दोनों समय आरती होती है तो कहीं केवल राजगद्दी के साथ आरती होती है। कहीं आरती पर चढ़ावा भी होता है।

रामनगर की रामलीला - रामनगर की रामलीला में प्रथम दिन रामबाग के पास विशाल तालाब में बृहदाकार शेषनाग पर लेटे विष्णु भगवान् की झाँकी दर्शनीय होती है। अवध में विश्वरूप की झाँकी, फुलवाड़ी और अष्टसखी सम्वाद, धनुष-यज्ञ, लंका-दहन, अंगद-विस्तार, राम-रावण युद्ध और राज्याभिषेक सभी दर्शनीय हैं। यहाँ भरत-मिलाप चौराहे पर रात बारह बजे होता है। रामनगर की लीला की विशेषता है साधु सन्तों का जमावड़ा। देश के सैकड़ों साधु सन्त यहाँ पधारते हैं और महाराज के अतिथि होते हैं। रामजी की बारात में आगे पुलिस बैण्ड चलता है। राम जन्म के समय गुलाल उड़ाया जाता है। विवाह में हजार छेद वाला मालपुआ बनता है। रामायणी दो दल में बैठते हैं और मशाल की रोशनी में प्रति-स्पर्धा पूर्वक मानस पाठ करते हैं। समूची लीला की अवधि में महाराज हाथी पर विराज कर लीला देखते हैं और उनकी उपस्थिति पूर्ण अनुशासन कायम रखती है।

जुलूस - जैसा अभी कहा रामजी की बारात की बात तो रामनगर में यही एक जुलूस निकलता है। हाँ विजयादशमी को महाराज की सवारी निकलती है जो दर्शनीय होती है। चित्रकूट -लीला में केवल भरत मिलाप के बाद चारों भाई विमान से अवध लौटते हैं, यही एक मात्र शोभा

यात्रा है। अन्य रामलीलाएँ बारात के अलावा दो यात्राएँ और निकालती हैं। एक है नक्कटैया और दूसरी भरत मिलाप की शोभा यात्रा। चेतगंज की नक्कटैया बहुत प्रसिद्ध है और काशी का लाखा मेला है। मुझे लगता है कि नक्कटैया की अवधारणा अशिव जुलूस के रूप में की गयी थी और इसमें शामिल स्वांग समाज की कुरूपता प्रगट करते थे - हत्या, शराबखोरी, दहेज, वेश्यावृत्ति, लूटमार आदि दिखाते थे, आगे आगे नाक कटी शूर्पनखा - मूसल नचाती चलती थी और पीछे हाथी या विमान में खरदूषण होता था। बीच में काली-दुर्गा का युद्ध नृत्य होता चलता था। पर स्वदेशी आन्दोलन के साथ सुधार की लहर चली तो उसमें इसका स्वरूप बदल गया। अब नक्कटैया में लाग, विमान आदि होते हैं और धार्मिक झाँकियाँ - भरत के तीर की नोक पर खड़े हनुमान्, शिव-पार्वती, झूठे बेर खिलाती शबरी आदि देख सकते हैं। नक्कटैया में काशी के ठठेरे अपनी कला का प्रदर्शन भी करते हैं और उनके बनाये नक्काशीदार विमान देख सकते हैं। भरत मिलाप शिव जुलूस होता है। इसमें धार्मिक झाँकियों के साथ बाँका - आभूषणों से सज्जित बालक - भी देखा जा सकता है। जुलूस के अन्त में राम पंचायतन की भव्य झाँकी होती है जिसे मार्ग में रोक कर लोग आरती उतारते हैं।

भरत मिलाप - नाटी इमली के भरत मिलाप की चर्चा बिना चर्चा अधूरी रह जाएगी। यह काशी का अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त लाखा मेला है। नाटी इमली के मैदान में पुष्पक विमान उतरता है, महाराज काशी नरेश इसकी परिक्रमा करते हैं, सामने वैष्णव भक्तों द्वारा सुंदर सजाये पक्के चबूतरे पर भरत शत्रुघ्न लेटते हैं। ठीक समय पर श्रीराम और लखन विमान से उतर कर दौड़ते हैं और बंधुओं को उठाकर गले लगा लेते हैं। पश्चिम से सूर्य, मिलन पर लाइट फोकस करते हैं। सायंकाल चार चालिस पर यह मिलाप होता है और सम्पूर्ण लीला की अवधि तीन चार मिनिट से अधिक नहीं होती। इस अपूर्व झाँकी के दर्शन के लिए दर्शक घंटों प्रतीक्षा करते हैं। बताते हैं कि यह लीला चमत्कारी है और जब श्रीराम विमान से उतर कर भरत की ओर दौड़ते हैं तो साक्षात् प्रभु एक क्षण को प्रकट हो जाते हैं - आस्थावान को दर्शन देते हैं। वैसे यह साधारण मिलाप नहीं है - राम-कृष्ण-शिव का, काशी मथुरा अवध का मिलाप है। भिन्न सम्प्रदायों - शैव, वैष्णव, रामानंदी लोगों के सौहार्द्र का प्रतीक है। सर्व धर्म समभाव का प्रतीक है।

चित्रकूट रामलीला में भरत मिलाप के अलावा राम घण्डैल, शबरी मंगल, सुबेल पर्वत की झाँकी, रावण वध, अयोध्या की ओर गमन, धनुष बाण की झाँकी, राज्याभिषेक और दशावतार की झाँकी दर्शनीय होती है।

अंत में गोस्वामी तुलसीदास के नाटक ज्ञान की चर्चा करना चाहूँगा -

नाच नटी इव सहित समाजा। नाचत नट मरकट की नाई
नटकृत विकट कपट सगराया। नटसेवकहि न व्यापहि माया
वेष प्रताप पूजिअहि तेऊ। संवदरसी जानहिं हरि लीला
विरह विकल नर इव रघुराई (मनहु महाकामी की बात भी कही),
धरि सीता कर रूप -
सारद दारू - नारि सम स्वामी —

राम को सूत्रधार, पुतली नचानेवाला कहा है, यानी तुलसीदास को यह बात भी मालूम थी कि डोरों से पुतली नचाई जाती है, तभी यह बात लिखी होगी — **इच्छामय नर वेष सँवारे,** (मेकअप करना, रूप बदलना)

ज्ञानी मूढ़ न कोई, जेहिं जस रघुपति करहिं

लेकिन एक चौपाई अद्भुत लिखी है। हम लोग यह पढ़ते रहे हैं कि स्टैनिस्लवास्की ने बताया कि अभिनय करने के लिए जो ऐक्टर है, उसको अपना व्यक्तित्व अलग कर देना चाहिए पात्र के व्यक्तित्व से। तभी ऐसा हो सकता है कि पात्र रो रहा है, आप मजे से देख रहे हैं। उसके बाद आप तुरन्त हँस भी सकते हैं क्योंकि सारा नियंत्रण आपके हाथ में है, पात्र के हाथ में नहीं है। होता क्या है कि यहाँ पारसी थियेटर के जमाने में सिखाया जाने लगा कि डूब जाओ, रोओ, असली रोओ, भावविह्वल हो जाओ। इसमें गड़बड़ हो जाती है। तो स्टैनिस्लवास्की ने यह पूरी एक प्रक्रिया अभिनय की ट्रेनिंग में सिखाई कि कैसे अपने व्यक्तित्व को दो टुकड़ों में बाँटना चाहिए। वे तो अभी हुए थे, डेढ़ सौ, दो सौ साल के अन्दर की बात है। पाँच सौ साल पहले गोस्वामीजी क्या लिख रहे हैं -

जथा अनेक वेष धरि नृत्त करे नट कोई।
सोइ सोइ भाव दिखावई आपु न होय सोई॥

स्वयं कभी वह राम नहीं बन जा ता, स्वयं कभी वह हनुमान् नहीं बन जाता। उसका व्यक्तित्व अलग रहता है। यह नट के लिए शिक्षा है। स्टैनिस्लवास्की से कई सौ साल पहले की बात है।

जासु त्रास डर कहुँ डर होई, भजन प्रभाव दिखावत सोई।

फिर लिखा है :-

जस काछिइ,तस चाहिय नाचा

जैसा वेष धरे वैसा ही नाचना चाहिए। इन्द्रजाल की बात भी करते हैं -

सो नट इन्द्रजाल नहीं भूला।

और मंच की भी बात कही -

उदित उदय गिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग।

मुझे लगता है जैसे वे उड़ीसा में गए होंगे उदयगिरि पर और सूर्योदय देखा होगा और फिर धनुष-यज्ञ की कल्पना के समय वह दृश्य उनके सामने आया तो यह शब्द इस्तेमाल किया

- उदित उदयगिरि मंच पर -

रामनगर रामलीला के बारे में कुछ और चर्चा करके बात समाप्त करूँगा। महाराज की उपस्थिति में अनुशासन की बात पहले कह चुका हूँ। लीला के बीच अगर कोई भी बोलने लगा, संवाद के बीच में, तो उसकी गर्दन पकड़ ली जाती है कि क्या करते हो ? जनता भी बहुत रोकती है। आप बोलिएगा तो आपको चुप करा देंगे। जब पाठ हो रहा हो उस वक्त आप बोल लीजिए। महाराज हाथ में एक रजिस्टर लिए रहते हैं। उसका नाम है रामायण परिचर्या परिशिष्ठ। सब संवाद उसमें लिखे हुए हैं। और इस रामलीला के निर्माता भी बहुत अद्भुत लोग थे - भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, राजा रघुराज सिंह, रीवां के , महान् संत काष्टजिह्वा स्वामी, बाबा खराब दास और स्वयं महाराज ईश्वरी नारायण सिंह। इन लोगों ने बैठ कर लीला की सारी तैयारी की। कहते हैं कि काष्टजिह्वा स्वामी को स्वप्न आया कि लीला कहाँ-कहाँ कैसे-कैसे हो। तो ये जो स्थल चुने गए हैं,वो सब उनके । भारतेन्दु ने स्वयं भी लीला लिखी, संवाद लिखे, रघुराज सिंह ने लिखी, बहुत से पद लिखे। यह सारी चीजें हुई हैं।अब आप समझ लीजिए कि यह जो हमारी राम लीला है, इसमें जो दर्शक अनुभूति है, इसके ऊपर डा. लिंडा हेस का एक बहुत अद्भुत लेख है कि ऐसा तादात्म्य कहीं होता ही नहीं। लोग रोते हैं आखिरी रोज कि प्रभु चले गये अब नहीं आयेंगे, चौधार आँसू रोते हैं। एक साल तक मैं क्या करूँगा ? अब तो वे चले गये। ऐसा तो किसी नाटक में कहीं और नहीं देखा। किंवा एक जीने का तरीका है।

हमारे रीति-रिवाज, विश्वास, कला-कौशल, दर्शन, सम्पदा, पौरुष, शौर्य, साहित्य, भक्ति, सब का सम्मेलन होता है इस रामलीला में और निस्संदेह यह हमारी एक विरासत है, इसको बचाना होगा। बचाने के लिए हमको एक पूरा म्यूजियम बनाना चाहिए, क्या बनाना चाहिए, कैसे-क्या करना चाहिए, इसके बारे में मैंने बहुत सा विचार तो किया। महाराज काशी नरेश ने एक रोज बहुत अच्छी बात मुझसे कही कि एक रिसर्च स्कॉलर को भेजो कि जाकर इन्डोनेशिया और अंकोरवाट वगैरह में जो राम-कथा के चित्र हैं उनकी फोटोग्राफ्स लेकर उनका अध्ययन करे, यहाँ पर एलोरा के मन्दिर में और अन्य स्थानों पर पत्थरों पर जो उत्कीर्ण हैं, उनका एक तुलनात्मक अध्ययन करे । अच्छी चीज है। और चित्रों में जो पेंटिग्स हैं, उनका भी अध्ययन होना चाहिए अलग से। जितनी रामकथाएँ हैं, आप सामने देख रहे हैं मैंने इस सूर्य में, रामकथा का सूर्य बनाकर बहुत से करीब चार-पाँच सौ राम कथाओं के नाम लिख दिये हैं। और विश्व में जो लीलाएँ होती हैं उनका भी उल्लेख है। एक और बात कह दूँ। हमारे यहाँ पुराण हैं जिसमें राम, कृष्ण वगैरह हुए उनकी कथा है, ठीक है। अन्य सभ्यताओं में भी पुराण हैं। और मैं खोजते-खोजते जब मिस्र देश गया तो वहाँ तीन पेपिरस पोथियाँ मिलीं। वहाँ भी लीला होती थी। मंदिरों में लीला होती थी। ओसिरिस, होरस और सेथ की। सेथ राक्षस है। उसके कन्धे पर ओसिरिस का शव लाद कर वे नील नदी में नाव पर लाते थे। होरस नाव लेकर एक शहर से दूसरे शहर तक जाता था। यह लीला नहीं है तो क्या है ? ऐसा ही ममर्स, यूनान की लीलाएँ हैं। बहुत सी लीलाएँ हैं मैंने एक अलग से अध्ययन किया कि विदेश में राम से अलग जो लीलाएँ होती हैं, राम-कथा से भिन्न, वो क्या हैं। और हमको अपने यहाँ मंच की डिजाइनें, मुखौटे, शृंगार के ढंग, वेशभूषा, राम कथा का कोश, कुछ पाण्डुलिपियाँ, पुतलियाँ आदि का संग्रह करना है। कुछ दूसरे देशों ने रामलीला के टिकट निकाले हैं। मुझे प्राप्त नहीं हुए हैं यहाँ एक आदमी के पास है। उसने वादा किया है कि देंगे। खिलौने रामलीला के हैं। तुलसी के महाकाव्य में और श्री अरविन्द की सावित्री में लीला सम्बन्धी बहुत सी चीजें हैं। इनको देखना होगा।

अब अंत में यही कहूँगा कि आध्यात्म रामायण के हिसाब से हमारे शरीर में सारी लीला रोज हो रही है। यदि समझ में न आये तो चलकर रामलीला देखनी चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए कि प्रभु कृपा करें । हमको भी दर्शन दें। हमारे हृदय में भी प्रकाश पैदा करें। अगर निराश हो रहे हों तो हनुमान्‌जी का सहारा लीजिए।

बजरंगबली की जय

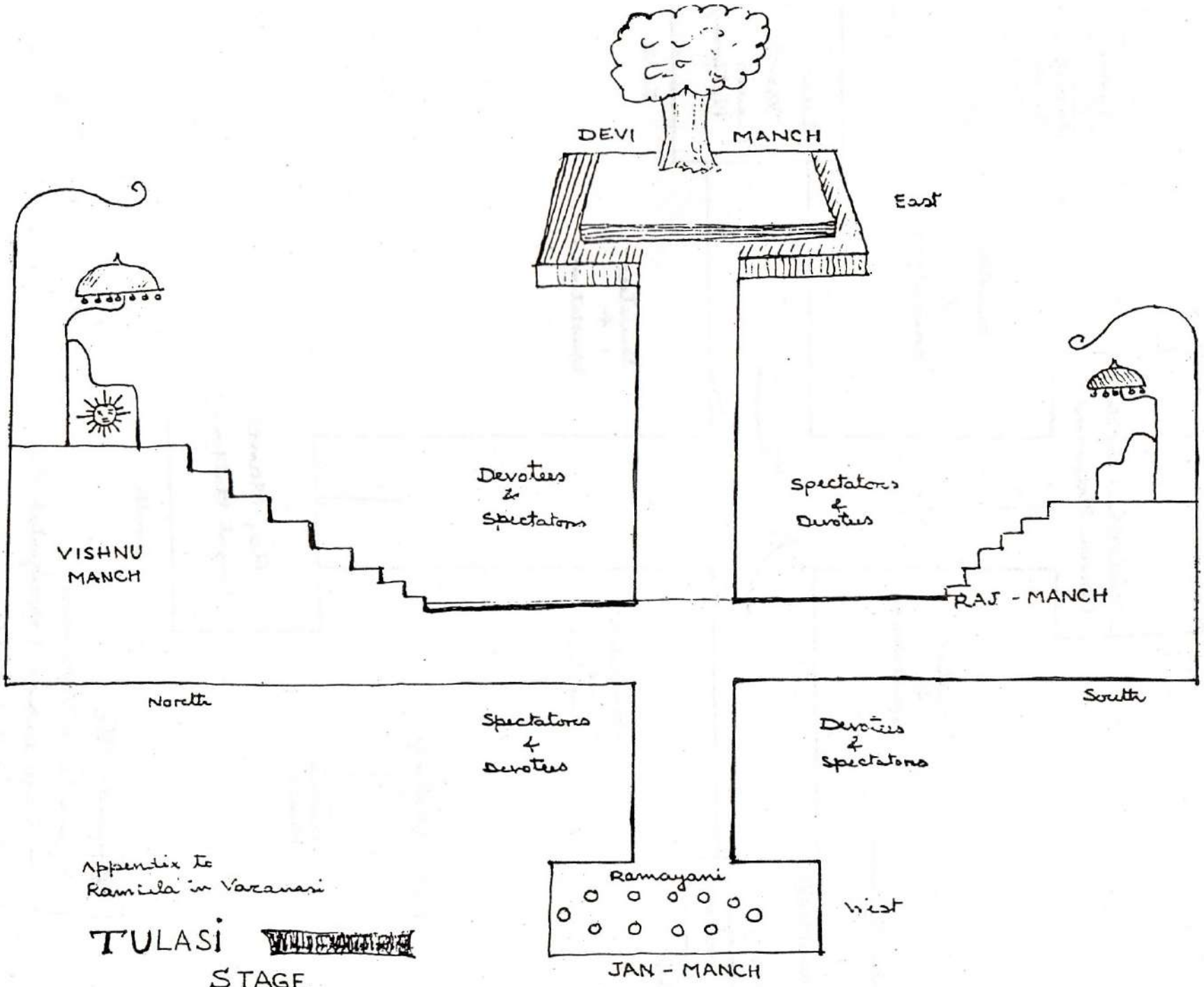

Appendix to
Ramila in Varanasi

TULASI [redacted]

STAGE
(Vertical Section)

Stage Design by Dr. B.S. Mehta

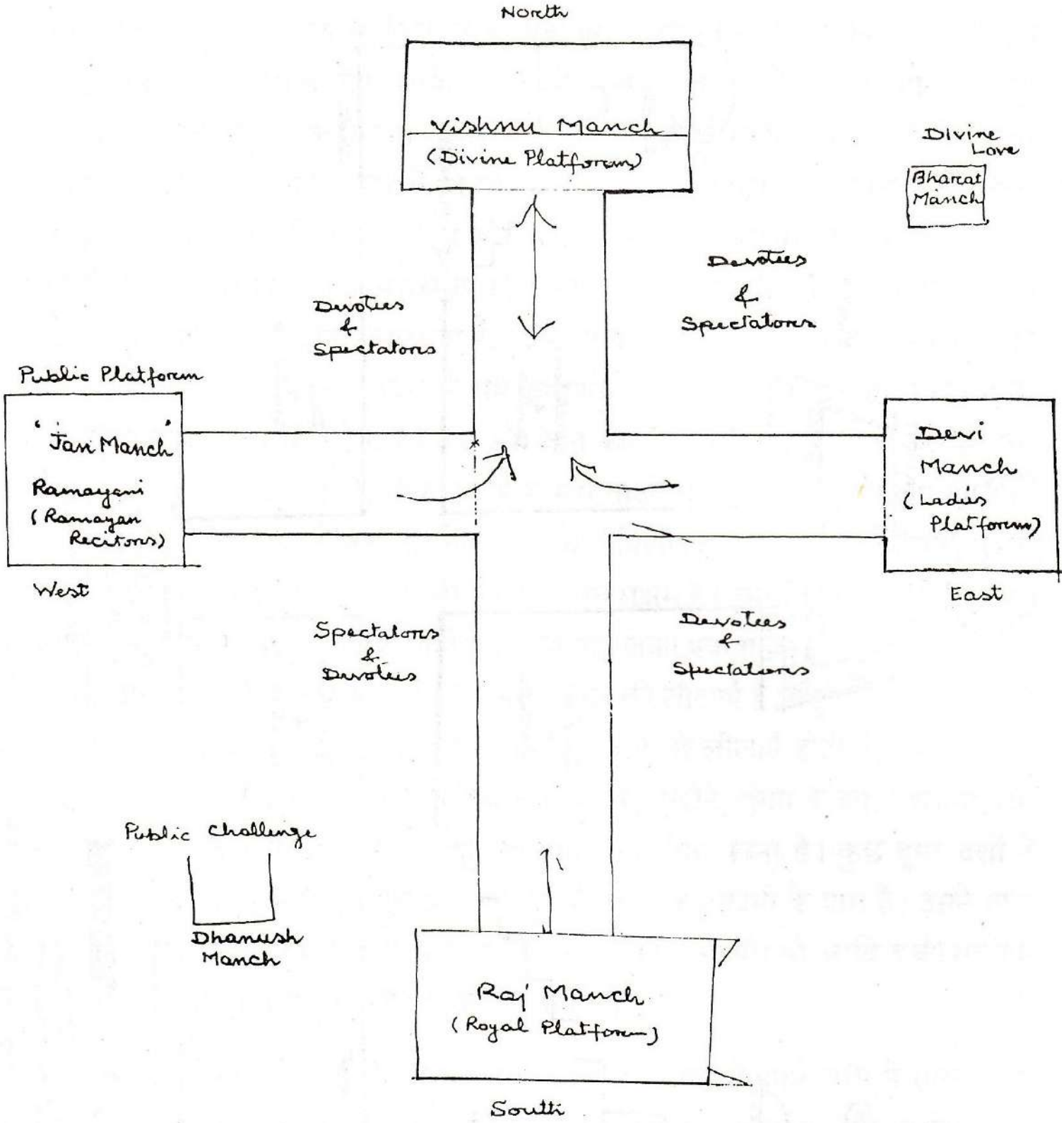

Appendix 'E'o
Ramlila in Varanasi
— Stage Design (Horizontal Plan)
by Dr B.S. Mehta

हरि अनंत - हरि कथा अनंता
श्री राम
रामायण शतकोटि अपारा